यात्रा वृत्तान्त

# ग्वालियर से खजुराहो

## एक साइकिल यात्रा

जयदीप शेखर

PREVIEW

# ग्वालियर से खजुराहो

## एक साइकिल यात्रा

आठ दिनों की साइकिल यात्रा (15-22 फरवरी 1995) की डायरी

जयदीप शेखर

JAGPRABHA.IN

**Cover Photo:**
This Photograph was clicked by author's friend KC Vinod, while commencing the journey.   .

-: eBook :-

**GWALIOR SE KHAJURAHO: EK CYCLE YATRA**
(Gwalior to Khajuraho: A Bicycle Trip )
Travel-diary of 8 days long bicycle trip from Gwalior to Khajuraho and back including stays at Orchha and Datiya. Language: Hindi.

**By**: Jaydeep Shekhar

**Photographs**: By author

**Copyright**: © 2023: Author

**Available at**: jagprabha.in
**Price**: ₹ 100.00

PREVIEW

# ग्वालियर से खजुराहोः एक साइकिल यात्रा

(15 से 22 फरवरी’ 1995)

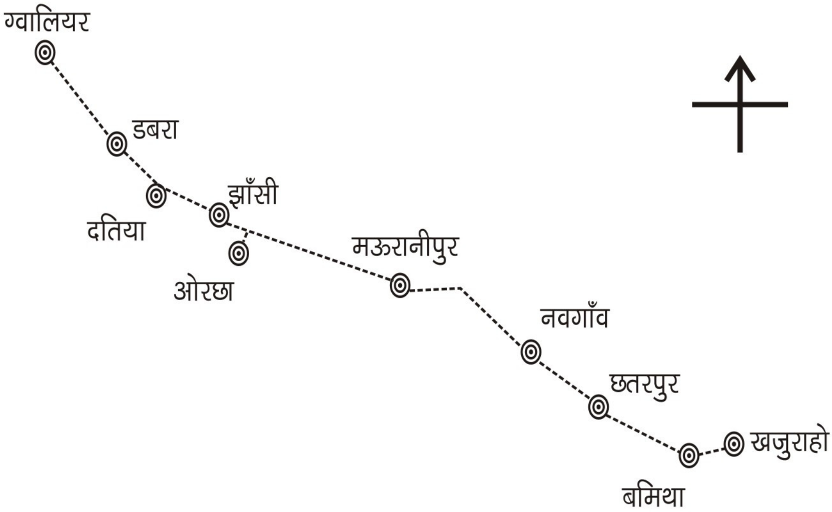


| | |
|---|---|
| ग्वालियर से डबरा | 46 किमी |
| डबरा से दतिया | 28 किमी |
| दतिया से झाँसी | 27 किमी |
| झाँसी से मऊरानीपुर | 64 किमी |
| मऊरानीपुर से नवगाँव | 42 किमी |
| नवगाँव से छतरपुर | 21 किमी |
| छतरपुर से बमिथा | 35 किमी |
| बमिथा से खजुराहो | 11 किमी |
| कुल | 274 किमी |
| वापसी | 274 किमी |
| ओरछा (आना–जाना) | 16 किमी |
| कुल | 564 किमी |

JAGPRABHA.IN

## *दो शब्द*

*28 साल पहले 1995 के फरवरी माह में मैंने ग्वालियर से खजुराहो तक की यात्रा साइकिल से की थी। वापसी में ओरछा और दतिया में भी ठहरा था। कुल-मिलाकर 8 दिनों में 564 किलोमीटर की यह यात्रा थी।*

*यात्रा के दौरान जो डायरी मैंने लिखी थी, यह वही डायरी है; सिर्फ खजुराहो मन्दिरों और ओरछा के रामराजा मन्दिर के इतिहास की कुछ बातें बाद में जोड़ी गयी हैं।*

*यह यात्रा मैंने क्यों की थी- इस प्रश्न का सटीक जवाब नहीं है। युवावस्था के दिनों में ऐसे छोटे-मोटे एडवेंचर में भाग शायद स्वाभाविक है।*

*-जयदीप शेखर*
*फरवरी 2023*

# ग्वालियर से खजुराहो: एक साइकिल यात्रा

**15 फरवरी' 95 (शाम 07:45)**

इस वक्त झाँसी के एक होटल 'अशोक' में बैठकर यह लिख रहा हूँ।

आज सुबह करीब सात बजे ग्वालियर (वायु सेना स्थल, महाराजपुर) से रवाना हुआ था- खजुराहो के लिए- साइकिल से।

मौसम अच्छा था। थोड़ी बूँदा-बाँदी हो चुकी थी- हवा में सोंधी महक थी। बदली भी छायी हुई थी। देवगण, कृष्णा, दत्ता, विनोद ने हँसी-मजाक में शुभकामनाएं दीं। विनोद ने दो फोटो भी खींचे।

गोले का मन्दिर होते हुए मैं स्टेशन की ओर बढ़ा। मोरार-ठाटीपुर वाले रास्ते में भीड़ ज्यादा होती है और दूरी भी ज्यादा है। फ्लाई-ओवर के बगल से निकलकर ए.जी. ऑफिस होते हुए ग्वालियर-झाँसी रोड (SH37) पर आया। माधवनगर के सामने एक चाय दूकान पर रूका- यहाँ पहले भी कभी एक बार आया था। चाय-ब्रेड खाकर फिर रवाना हुआ।

हल्की ठण्ड थी। शहर से बाहर आकर कैरियर पर रखे बड़े बैग को ठीक किया और साइकिल की सीट पर स्पंज के टुकड़े को बाँधा। अब तक चैन ढीली पड़ चुकी थी। (नयी चैन को एक-दो दिन साइकिल चलाने के बाद फिर कसवाना पड़ता है।) आवाज हो रही थी और साइकिल भारी चल रही थी। टेकनपुर से पहले पड़नेवाली पहाड़ियों पर जहाँ-जहाँ चढ़ाव था- वहाँ हालत थोड़ी खराब हुई।

साइकिल में मैंने 'रियर व्यू मिरर' लगवा लिया था, जो बहुत काम दे रहा था। टेकनपुर में बी.एस.एफ. अकादमी से गुजरने के बाद एक नुक्कड़ में रूका। चाय पी। चैन कसवायी। अब साइकिल मजे से चलने लगी। रास्ता भी समतल आ

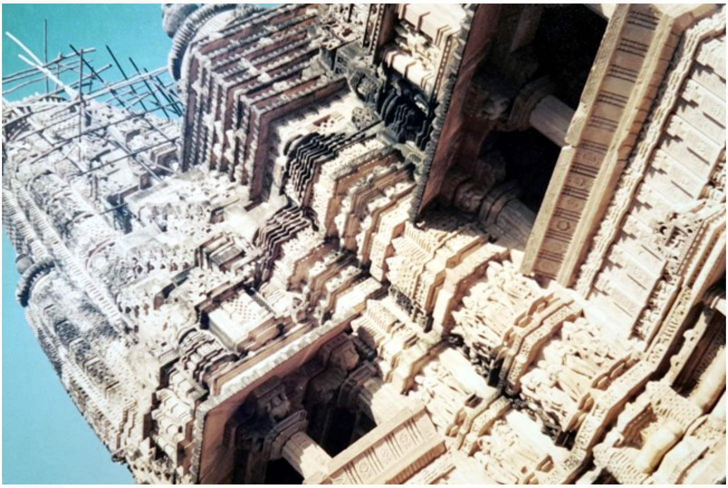

गया।

उम्मीद के मुताबिक साढ़े बारह बजे तक डबरा पहुँच गया। बाजार से बाहर आकर एक ढाबे में रूका। तौलिया थोड़ा गीला था- उसे साइकिल पर टाँगा। पाँच तन्दूरी रोटी, दाल-फ्राई और सलाद खाकर वहीं एक चारपाई पर लेट गया- आधे घण्टे के लिए।

डबरा से पौने दो बजे चला। अब मौसम उदास लग रहा था। अकेलापन भी बुरा लग रहा था। सड़क अच्छी थी। कुछ देर के लिए तो करीब तीन मिनट प्रति किलोमीटर की रफ्तार से साइकिल भाग रही थी।  बीच में एक जगह सुस्ताया भी था।

करीब तीन बजे एक बड़ा-सा चबूतरा नजर आया- बड़े नीम और पीपल के पेड़ों के नीचे। तुरन्त देवगण के दिये हुए स्पंज के बड़े शीट को ग्राउण्ड-शीट की तरह बिछाया, छोटे शीट को मोड़कर तकिया बनाया और लम्बा लेट गया। लेटे-लेटे 'चन्दामामा' की कहानियाँ याद आयीं- जब राहगीर घोड़ा बाँधकर बावली में पानी पीकर पेड़ की ठण्डी छाँव में सो जाते थे- तब कोई-न-कोई दैवी घटना घट जाती थी।

दतिया में दूर से ही महलों को देखा- सचमुच देखने लायक लगे। सोचा, लौटते समय इन महलों को जरुर देखना है। (रास्ते में सोनागीर के जैन मन्दिर

भी काफी दूर से दिखाई पड़े थे।) एस.एन.सिंह ने 'ठेकुए'-जैसा एक पकवान दिया था। साइकिल के हैण्डल पर टँगे हैवर-शेक में वह रखा था। बीच-बीच में वही चबाते हुए मैं चलता रहा। (बहुत बाद में उस पकवान का नाम ध्यान आया- 'अनरसा।')

झाँसी शाम के छह बजने से पहले पहुँच गया। चूँकि अन्धेरा नहीं घिरा था, इसलिए पहले तो मैं आगे बढ़ गया, फिर लगा- सही आराम और सुरक्षा जरूरी है। मुड़कर एक सज्जन से पूछकर पहले प्रकाश होटल में गया। वहाँ सिंगल कमरे का किराया नब्बे रुपये था। वहीं के लड़के ने अशोक होटल का सुझाव दिया। यहाँ आया तो कमरा पैंतालीस रुपये में मिला- जबकि कमी कुछ नहीं है।

अटैच्ड बाथरूम, वाश-बेसिन, चेयर-टेबल, कैम्पर, दो रैक सब कुछ हैं। इतना कम किराया क्यों है, पता नहीं। स्टाफ भी अच्छे हैं। अभी एक स्टाफ साइकिल अन्दर

रख लेने के लिए बोलने आया था। साइकिल अन्दर रखकर, पैरों पर तेल की मालिश कर अब खाना खाने की तैयारी है।

**17 फरवरी' 95 (दिन 11:00 बजे)**

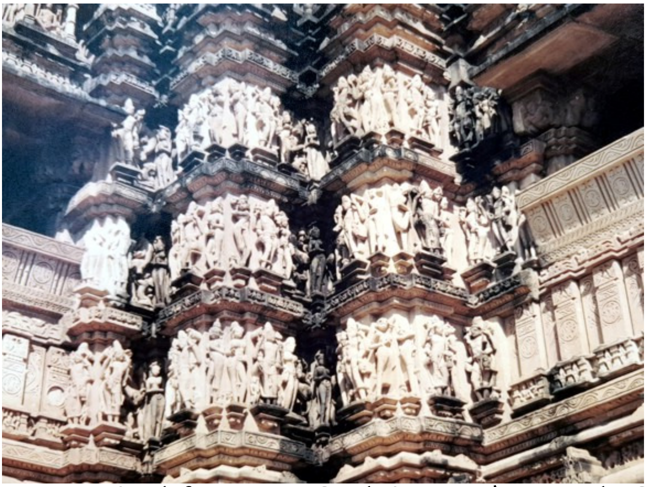

छतरपुर शहर अभी कोई दस-बारह किलोमीटर दूर है। सड़क के किनारे एक छोटे-से जंगल में बैठकर यह लिख रहा हूँ। जंगल की निस्तब्धता को चिड़ियों के तरह-तरह के कलरव तथा बीच-बीच में गुजरने वाले वाहन भंग कर रहे हैं।

हाँ, तो रात झाँसी के होटल में सोते समय शुरू में ठण्ड लग रही थी। रजाई ओढ़कर सोया, मगर वह मोटी थी। बाद में गर्मी लगने लगी। बैग से चादर निकाल कर ओढ़ा। अब दो-चार मच्छर काटने लगे। अन्त में, पंखा चलाकर रजाई ओढ़ लिया। यह ठीक रहा।

जब नीन्द खुली, तब भोर के तीन-पच्चीस हो रहे थे। इतनी जल्दी नीन्द शायद इसलिए खुल गयी कि रात जल्दी सोया था। इसके बाद ठीक से नीन्द नहीं आई।

साढ़े पाँच बजे से तैयार होने लगा और साढ़े छह बजते-बजते मेरी साइकिल तैयार थी- यात्रा के अगले चरण के लिए।

एक टेम्पो वाले की सहायता करने में बीस मिनट देर हुई। घुटनों में दर्द महसूस हो रहा था। खासकर दाहिने घुटने में। ट्रैक-सूट के साथ अन्दर मैंने 'इनर' पहन लिया था- ठण्ड थी।

मैं उस सड़क पर आगे बढ़ा, जो शिवपुरी जाती थी। क्योंकि रात मैंने दो लोगों से पूछा था और दोनों ने बताया था कि यही सड़क छतरपुर भी जाती है। लेकिन चलते वक्त मुझे लग रहा था कि मुझे तो पूरब और दक्षिण के बीच चलना चाहिए, जबकि यह बिल्कुल पश्चिम था। अगले चौराहे पर एक सज्जन से पूछा,

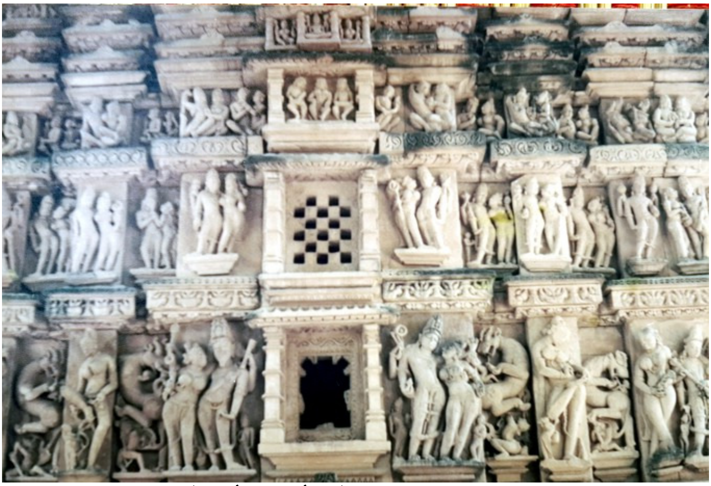

तो पता चला एकदम पीछे लौटना है। मेरा अन्दाज सही निकला। वापस लौटकर पिछले चौराहे से जो रास्ता चुना, वह ठीक पूरब और दक्षिण के बीच था।

सोचा था, झाँसी शहर से बाहर आते ही चाय पीऊँगा और साइकिल में हवा भी डलवा लूँगा। वैसे, साइकिल में हवा शायद रात में ही डलवा लेनी चाहिए थी। काफी भारी चल रही थी। शहर से बाहर चाय दूकान तो मिल गयी, मगर साइकिल दूकान नहीं मिली। सोचा, ओरछा में बाजार होगी- वहीं हवा डलवा ली जायेगी। ऊँचे-नीचे पठारी रास्ते पर मैं चलता रहा। घुटनों का दर्द और टायरों की कम हवा सफर का मजा किरकिरा किये दे रही थी।

ग्यारह किलोमीटर के बाद पता चला, ओरछा यहाँ से आठ किलोमीटर है और उसका रास्ता अलग है। लाचार होकर मैं आगे ही बढ़ता रहा। मील के पत्थरों पर कोई 'बरूआसागर' नजर आ रहा था- सोचा, वहीं नाश्ता भी कर लूँगा।

इस दौरान दो घटनाएं घटीं।

एक पेड़ के नीचे से गुजरते वक्त अचानक मुझपर कुछ मधुमक्खियों का हमला हो गया। समझने में एकाध सेकेण्ड का समय लगा और उसके बाद काहे की सुस्ती! जल्दी से सिर से कैप उतारकर एक हाथ से उसे मधुमक्खियों पर फटकारते हुए मैंने जोर से साइकिल भगायी। कुछ दूर साइकिल भगाने के बाद

उनसे पीछा छूटा- कोई मधुमक्खी डंक नहीं मार पायी।

दूसरी घटना ऐसी घटी कि रास्ते में एक छोटा-सा, पुराना, पर आकर्षक मन्दिर नजर आया। पुरातत्त्व विभाग का बोर्ड भी लगा था- 'जरायु मन्दिर।' सोचा, लौटते समय देखूँगा। अभी पचास मीटर ही आगे गया होऊँगा कि दाहिने घुटने का दर्द एकाएक बढ़ गया। तुरन्त वापस लौटा- मन्दिर में जाकर क्षमा माँगने के लिए। अन्दर जाकर देखा, तो गर्भगृह से प्रतिमा गायब थी। बाहर की मूर्तियों के भी सर गायब थे। मेरे ख्याल से, कुछ तस्कर लोग इन पुराने मन्दिरों की मूर्तियों के सिर निकाल कर बेचने का धन्धा करते होंगे।

कहने की जरुरत नहीं कि मन्दिर में क्षमा माँगने के बाद जब मैं वापस साइकिल पर सवार हुआ, तो मेरे घुटने का बढ़ा हुआ दर्द जा चुका था!

खैर। मुश्किल से और बड़ी उम्मीद के साथ बरूआसागर पहुँचा, तो पाया, बस-स्टैण्ड तो काफी बड़ा और व्यस्त है, पर एक भी साइकिल दूकान नहीं है। एक बूढ़े बाबा गुमटी में अपने-जैसा ही एक पम्प लिये बैठे थे। जैसे-तैसे करके थोड़ी हवा डाली। चैन भी कसवानी थी, पर बाबा का कहना था कि उन्हें एस.एल.आर साइकिल का कुछ पता नहीं। वहाँ गाजर का हलवा खाया, चाय पी। 'इनर' और ट्रैक सूट का 'अपर' निकाल दिया- गर्मी पड़ने लगी थी। टी-शर्ट पहना। तब तक एक दूसरा साइकिल रिपेयर करने वाला आ गया था। उसने फिर हवा डाली और

चैन कसी।

आगे मध्य-प्रदेश और उत्तर प्रदेश के साईनबोर्ड मानो आँख-मिचौनी खेल रहे थे। अभी एम.पी. तो अभी यू.पी.। कभी-कभी याद ही नहीं रहता था कि मैं किस राज्य से गुजर रहा हूँ। बेतवा नदी के पुल पर आकर थकान थोड़ी मिटी। सामने दोनों तरफ पहाड़ियाँ और जंगल। बाँई तरफ यौवन से भरपूर बेतवा नदी। साफ पानी- सम्भवतः ठण्डा भी। दाहिनी ओर वही नदी पत्थरों के बीच से गुजर रही थी। उसी ओर दूरी पर ओरछा के महल आदि दिख रहे थे। फिलहाल ओरछा जाने का इरादा मैंने छोड़ दिया था, क्योंकि मेरा मुख्य मकसद खजुराहो था।

बेतवा नदी के बाद जिन पहाड़ियों और जंगलों का सिलसिला शुरू हुआ, उससे मुझे अपने इलाके की राजमहल की पहाड़ियों की याद आ गयी। वही मिट्टी, वही वनस्पति, वही महक और उन्हीं चिड़ियों की आवाजें।

घुटने के दर्द के बावजूद इस प्राकृतिक दृश्य का उपभोग करते हुए ऊँचे-नीचे रास्ते पर मैं चलता रहा। कई बार चढ़ाव पर पैदल ही चलना पड़ा।

इस बार मेरी रफ्तार कम थी। पठारी रास्तों के चढ़ावों ने काफी परेशान किया। फिर भी, हरे-भरे सरसों और गेहूँ-जौ के खेतों और नीली पहाड़ियों ने बोर नहीं होने दिया।

मऊरानीपुर अभी पन्द्रह-बीस किलोमीटर दूर था- जब एक बजे करीब भूख

लगी। आपात्कालीन भोजन के रुप में चिड़वा साथ था। साइकिल एक ओर रखकर एक पेड़ के नीचे बैठकर मैंने वही खाया। पास ही हैण्ड पम्प था। खाकर पेड़ की छाँव में जूते उतारकर मैं लेट गया। अब तक सिर्फ चाय पीते हुए ही आ रहा था- बीच-बीच में एस एन सिंह का पकवान खा रहा था। एक कस्बे में एक बुजुर्ग ने चाय का पैसा भी नहीं देने दिया था।

पौने दो बजे वहाँ से चला। साढ़े तीन बजे जब मऊरानीपुर पहुँचा, तब एक बड़ी भूल का अहसास हुआ। मैंने अपने नक्शे में मऊरानीपुर से नवगाँव की दूरी चौबीस (24) किमी दिखा रखी थी और आज अन्धेरा घिरने से पहले वहाँ पहुँचने की उम्मीद कर रहा था। लेकिन मऊरानीपुर में साईनबोर्ड बता रहे थे कि नवगाँव

वहाँ से बयालीस (42) किमी दूर था। गलती तो हो चुकी थी। एक चाय दूकान पर मैंने नक्शे को ठीक किया।

प्रसंगवश, एक बात का जिक्र कर दूँ कि ऐतिहासिक पृष्ठभूमि पर अनेक प्रसिद्ध उपन्यासों (जिनमें से एक 'मृगनयनी' है) की रचना करने वाले लेखक वृन्दावन लाल वर्मा जी इस मऊरानीपुर के ही हैं।

आज जो रफ्तार थी, उसके हिसाब से अब नवगाँव पहुँचने में कम-से-कम रात के आठ बजेंगे। कुल दूरी भी सौ किमी से ज्यादा हो जायेगी। एक दिन में सौ किमी से ज्यादा साइकिल चलाना उचित नहीं था। न ही रात में सफर करना

उचित था। दूसरी ओर, इतना दिन रहते मऊरानीपुर में रूकना भी उचित नहीं था। अन्त में मैंने जोखिम लिया और पौने चार बजे वहाँ से आगे रवाना हो गया- सोचा जहाँ अन्धेरा होगा, वहीं रात गुजार लूँगा। तैयारी करीब-करीब पूरी थी।

हाँ, एक बात; मऊरानीपुर से पन्द्रह किमी पहले जहाँ मैंने खाना खाया था, वहाँ से रास्ता समतल था। कुछ खाने की भी एनर्जी थी। वहाँ से साइकिल अच्छी चली थी। यहाँ मऊरानीपुर से निकलते ही चढ़ाव और ढलान वाली सड़क फिर शुरू हो गयी। अब तक मुझे चढ़ाव से डर लगने लगा था। कई बार चढ़ाव पर पैदल चलना पड़ा। यह पैरों के लिए अच्छा भी था। लगातार साइकिल यात्रा के दौरान बीच-बीच में शायद पैदल भी चलना चाहिए। कल ऐसा न करके मैंने

गलती की थी। एक स्थानीय साइकिल-सवार ने भी यही सलाह दी। अब रास्ते में पड़ने वाले छोटे-मोटे कस्बों व बाजारों में लोग पूछने लगे थे- कहाँ से आ रहे हो, कहाँ तक जाना है- वगैरह।

खैर, रफ्तार कम होने के बावजूद आठ बजे रात तक नवगाँव पहुँचने की उम्मीद थी। एक डैम के पास एक अजीबो-गरीब पुल को पार करने के बाद अन्तिम रुप से मध्य प्रदेश राज्य की शुरुआत हुई। वहीं शाम भी ढली। कुछेक किमी चलने के बाद मैंने ट्रैक-सूट पहना। अब तक हाफ पैण्ट और टी शर्ट में ही

काम चल रहा था। हाफ पैण्ट पहनने का आइडिया मुझे बरूआसागर के बाद आया- क्योंकि वहीं से मैंने दो-तीन घण्टों बाद-बाद घुटनों पर आयोडेक्स की मालिश शुरू की थी। हाफ पैण्ट में आयोडेक्स लगाना आसान था और साइकिल चलाते वक्त भी घुटनों पर मालिश की जा सकती थी।

मेरे दाहिने तरफ सूरज डूब रहा था और मैं चाहकर भी स्पीड बढ़ा नहीं पा रहा था। यूँ तो पूनम की रात थी, लेकिन सूरज के डूबने और चाँद के उगने के बीच करीब आधा घण्टा अन्धेरा रहेगा- ऐसा मेरा अनुमान था।

धीरे-धीरे अन्धेरा भी ढला। नवगाँव बीस किमी दूर था। रात घिरने के बाद एक चेक-पोस्ट आया। वहीं एक पैकेट बिस्कुट खाया, चाय पी। मऊरानीपुर में शायद अण्डा खा लेना चाहिए था- कुछ ज्यादा ऊर्जा मिलती। चाय पीकर थोड़ा जोश आया।